**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द के मुख्य कार्य वेदभाष्य का उनके द्वारा प्रस्तुत नमूना’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन के प्रारम्भिक 38 वर्ष धार्मिक व आध्यात्मिक तथ्यों के अन्वेषण व अध्ययन सहित योग विद्या को जानने व उसका अभ्यास करने में व्यतीत किए। सौभाग्य से उन्हें वेद एवं आर्ष ज्ञान के अद्भुत श्रद्धालु एवं मर्मज्ञ विद्वान प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती का शिष्यत्व प्राप्त हुआ। इन गुरुजी से मिलने से पहले स्वामीजी अनेक विषयों के अच्छे विद्वान व जानकार होने के साथ सफल योगी बन चुके थे। उनका व्यक्तित्व आकर्षक व प्रभावशाली था तथा उनकी बौद्धिक व शारीरिक क्षमतायें भी असामान्य व असाधारण थी। इस गुण के कारण वह स्वामी विरजानन्द जी से आर्ष व्याकरण सहित समस्त वैदिक ज्ञान मात्र लगभग 3 वर्षों में ग्रहण कर पाने में सफल हुए। गुरु विरजानन्द जी से स्वामी दयानन्द ने सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर द्वारा प्रकाशित चार वेदों का ज्ञान वा उनके सभी मन्त्रों के सत्य अर्थ करने की योग्यता भी प्राप्त की। अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न चार ऋषियों आग्नि, वायु आदित्य व अंगिरा को ईश्वर ने चार वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का ज्ञान उनकी आत्मा में अन्तःप्रेरणा द्वारा प्रदान किया था। इस ज्ञान से संबंधित सभी शंकाओं का समाधान स्वामी दयानन्द ने गुरु विरजानन्द से प्राप्त किया था व अपने शिक्षणकाल के बाद आवश्यकता पड़ने पर गुरुजी से उनके जीवनपर्यन्त प्राप्त समाधान प्राप्त करते रहते थे। गुरुजी की प्ररेणा व आज्ञा से ही स्वामी दयानन्द जी ने अपना समस्त जीवन भारत व विश्व की अज्ञानी व अबोध जनता से अन्धविश्वासों व रूढि़यों को हटाकर इस मिथ्या ज्ञान के स्थान पर ईश्वर के ज्ञान वेद को स्थापित करने का कार्य किया। उन्होंने गुरू जी को दिए अपने वचनों को गुरूजी से विदाई के दिन से लेकर जीवन की अपनी अन्तिम श्वांस तक निभाया। स्वामी जी ने अनेक कार्य किये। उपदेशों द्वारा प्रचार के साथ उन्होंने ग्रन्थ लेखन, वार्तालाप, शंका-समाधान, लिखित व मौखिक शास्त्रार्थ, आर्यभाषा-हिन्दी और गोरक्षा के पक्ष में हस्ताक्षर अभियान व देशवासियों को पत्र व लघु ग्रन्थों द्वारा प्रेरणा आदि कार्य किए। चार वेदों के संस्कृत व हिन्दी में अपूर्व भाष्य के लेखन का कार्य उनका एक प्रमुख कार्य था। इस कार्य का शुभारम्भ करते हुए उन्होंने सबसे पहले अपने करिष्यमाण वेदभाष्य का स्वरूप जनता पर प्रकट करने के लिये सन् 1875 (विक्रमी संवत् 1931) में ऋग्वेद के प्रथम सूक्त का भाष्य नमूने के रूप में प्रकाशित कराया था। इस सम्बन्ध में स्वामीजी के एक जीवनीकार पं. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय ने लिखा है कि **‘‘स्वामी जी ने ऋग्वेद के पहले सूक्त का भाष्य, जिसमें गुजराती और मराठी अनुवाद भी था, वेदभाष्य के नमूने के तौर पर प्रकाशित किया। जिसमें ऋग्वेद के पहले मन्त्र ‘अग्निमीळे पुरोहितम्’ आदि के दो अर्थ किये थे। एक भौतिक दूसरा पारमार्थिक। उसकी भूमिका में लिखा था कि मैं सारे वेदो का इसी शैली पर भाष्य करूंगा। यदि किसी को इस पर कोई आपत्ति हो तो पहले ही सूचित कर दे, ताकि मैं उसका समाधान करके ही भाष्य करूं। यह नमूना स्वामी जी ने काशी के पण्डित बालशास्त्री, स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती प्रभृति तथा कलकत्ता और अन्य स्थानों के पण्डितों के पास भेजा था, परन्तु किसी ने भी उसकी आलोचना व उस पर शंका नहीं की।”**

इसके बाद ही महर्षि दयानन्द ने चारों वेदों की भूमिका के रूप में ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (लेखन आरम्भ तिथिः 20 अगस्त, 1976) से आरम्भ कर यजुर्वेद व इसके साथ-साथ ऋग्वेद का भाष्य किया। यजुर्वेद का पूर्ण भाष्य करने में वह सफल हुए तथा मृत्युपर्यन्त ऋग्वेद के सातवें मण्डल के 62 वें सूक्त के दूसरे मन्त्र तक (ऋग्वेद के कुल 10552 मन्त्रों में से 5649 मन्त्रों का) भाष्य किया। स्वामीजी ने अपने ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए प्रयाग में एक मुद्रणालय वा प्रेस भी स्थापित किया था। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित यजुर्वेद भाष्य और ऋग्वेदभाष्य क्रमशः मासिक अंकों में प्रकाशित होता था और इस वेदभाष्य को देश-देशान्तर के ग्राहकों को भेजा जाता था। इंग्लैण्ड के प्रोसेफर मैक्समूलर और मोनियर विलियम्स भी वेदभाष्य के नियमित ग्राहक थे। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के मासिक अंक संख्या 7 पर ग्राहकों के नामों की सूची प्रकाशित की गई थी जिनमें यह दोनों प्रसिद्ध विदेशी विद्वान व हस्तियां भी सम्मिलित थी। सूची में इस बात का भी उल्लेख है कि विदेशी ग्राहकों से साढ़े चार रूप्या वार्षिक शुल्क प्राप्त हुआ था।

अब हम पाठकों की सेवा में महर्षि दयानन्द के ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के नौ मन्त्रों के भाष्य के नमूने के अंक से प्रथम मन्त्र का पारमार्थिक अर्थ प्रस्तुत कर रहे हैं। मन्त्र है-**‘ओ३म्। अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।।1।।’** मन्त्र को प्रस्तुत कर महर्षि दयानन्द ने इस मन्त्र में प्रयुक्त अग्नि आदि शब्दों के उनके द्वारा किये जाने वाले अर्थों के संस्कृत में अनेक प्रमाण दिये हैं और उसके पश्चात संस्कृत व हिन्दी में भाष्य किया है। मन्त्र का हिन्दी भाष्य इस प्रकार है--‘(अग्निमीळे) इस मन्त्र का ईश्वर के अभिप्राय से जो अर्थ है सो प्रथम किया जाता है। इस मन्त्र में अग्नि शब्द से परमेश्वर का ग्रहण होता है। इसके ग्रहण से **‘इन्द्र मित्रं वरुण’** इत्यादि यथालिखित प्रमाण का आधार है। सब जगत् को उत्पन्न करके, संसार के पदार्थों का और परमात्मा का जिससे यथार्थ ज्ञान होता है, उस सनातन अपनी विद्या का सब जीवों के लिए आदि सृष्टि में परमात्मा ने उपदेश किया है। जैसे अपनी संतानों को पिता उपदेश करता है, वैसे ही परम कृपालु पिता जो परमेश्वर है, उसने हम सब जीवों के हित के लिए सुगमता से वेदों का उपदेश किया है जिससे धर्म, अर्थ, काम मोक्ष और सब पदार्थों का विज्ञान और उनसे यथावत् उपकार लेवें, इसलिए अत्यन्त हित से हम लोगों को उपदेश किया है सो हम लोग भी अत्यन्त प्रेम से इसको स्वीकार करें। अब जैसा उपदेश परमात्मा को करना है सो सब जीवों की ओर से परमेश्वर करता है, कि जीव जब इस वेद को पढ़े, पढ़ावे, पाठ करें और विचारेंगे तब यथावत् कत्र्ता, क्रिया और कर्म का सम्बन्ध हो जाएगा। जो एक जानने-वाला, शुद्ध, सब विकारों से रहित, सनातन, जो सब काल में एकरस बना रहता है, जो अज है, जिसका कभी जन्म नहीं होता, जो अनादि है, जिसका आदि कारण कोई नहीं, जो अनन्त है, जिसका अन्त कोई नहीं जान सकता, जगत् में जो परिपूर्ण हो रहा है, सब जगत् का आदिकारण और जो स्वप्रकाशस्वरूप है, ऐसा जो परमेश्वर जिसका नाम अग्नि है, उसकी मैं स्तुति करता हूं। इससे भिन्न कोई दूसरा ईश्वर नहीं है, और उसको छोड़के दूसरे का लेशमात्र भी आश्रय मैं कभी नहीं करता। किस प्रयोजन के लिए? धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनकी सिद्धि के लिए। **अत्र्जु गतिपूजनयोः** इत्यादि धातुओं से अग्नि शब्द सिद्ध होता है, **अत्र्चतीत्यादि0** जो सबको जानता है, जो सब वेदादिक शास्त्रों से जाना जाता है, जो सबमें गत नाम प्राप्त हो रहा है, जो सर्वत्र प्राप्त होता है, जो सब धर्मात्माओं का सत्कार करता है, जिसका सत्कार सब विद्वान लोग करते हैं, जो सब सुखों को प्राप्त कराता है और जो सब सुखों के अर्थ प्राप्त किया जाता है, इस प्रकार व्याकरण निरुक्त आदि के प्रमाणों से अग्नि शब्द से परमेश्वर के ग्रहण में कोई भी विवाद नहीं है।

पूर्वोक्त अग्नि कैसा है कि (पुरोहितः) सब देहधारियों की उत्पत्ति से प्रथम ही सब जगत् और स्वभक्त धर्मात्माओं के लिए सब पदार्थों की उत्पत्ति जिसने की है और विज्ञानादि दान से जो जीवादि सब संसार का धारण और पोषण करता है, इससे परमात्मा का नाम पुरोहित है। पुरःपूर्वक क्त प्रत्ययान्त डुधाञ्ज धातु से पुरोहित शब्द सिद्ध हुआ है। इसी से सबका धारण और पोषण करने वाला एक परमात्मा ही है। अन्य कोई भी नहीं । इस पुरोहित शब्द में पुर एनं0 इत्यादि निरुक्त का भी प्रमाण है। (यज्ञस्य देवम्) यज् धातु से यज्ञ शब्द सिद्ध होता है। इसका यह अर्थ है कि अग्निहोत्र से लेके अश्वमेघपर्यन्त विविध क्रियाओं से जो सिद्ध होता है, जो वायु और वृष्टि जल की शुद्धि द्वारा सब जगत् को सुख देनेवाला है उसका नाम यज्ञ है, अथवा परमेश्वर के सामथ्र्य से सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण, इन तीनों गुणों की जो एक अवस्थारूप कार्य उत्पन्न हुआ है जिसका प्रकृति अव्यक्त और अव्याकृतादि नामों से वेदादि शास्त्रों ने कथन किया है, उससे लेके पृथिवी पर्यन्त कार्य कारण संगति से उत्पन्न हुआ जो जगत् रूप यज्ञ है, अथवा सत्यशास्त्र सत्यधर्माचरण सत्पुरुषों के संग से जो उत्पन्न होता है, जिसका नाम विद्या, ज्ञान और योग है, उसका भी नाम यज्ञ है, इन तीनों प्रकार के यज्ञों का जो देव है, जो सब सुखों का देनेवाला, जो सब जगत् का प्रकाश करने वाला, जो सब भक्तों को आनन्द करानेवाला, जो अधर्म अन्यायकारी शत्रुओं का और काम क्रोधादि शत्रुओं का विजिगीषक नाम जीतने की इच्छा पूर्ण करनेवाला है, इससे ईश्वर का नाम देव है।

**(ऋत्विजम्)** जो सब ऋतुओं में पूजने योग्य है, जो सब जगत् का रचने वाला और ज्ञानादि यज्ञ की सिद्धि का करनेवाला है, इससे ईश्वर का नाम ऋत्विज् है। ऋतु शब्दपूर्वक क्वन् प्रत्ययान्त यज् धातु से ऋत्विज् शब्द सिद्ध होता है। **(होतारम्)** जो सब जगत् के जीवों को सब पदार्थों को देनेवाला है। जो मोक्ष समय में मोक्ष को प्राप्त हुए जीवों का ग्रहण करने वाला है तथा जो वर्तमान और प्रलय में सब जगत् का ग्रहण और धारण करनेवाला है, इससे परमात्मा का नाम होता है। **हु दानादनयोः। आदाने चेत्येके।** इस धातु से तृच् प्रत्यय करने से होता शब्द सिद्ध हुआ है। **(रत्नधातमम्)** जिनमें रमण करना योग्य है, जो प्रकृत्यादि पृथिवीपर्यन्त रत्न यथा विज्ञान, हीरादि जो रत्न और सुवर्णदि जो रत्न हैं, जिनके यथावत् उपयोग करने से आनन्द होता है, उन रत्नों का सब जीवों को दान के लिए जो धारण करता है, वह रत्नधा कहाता है, और जो अतिशय से पूर्वोक्त रत्नों का धारण करनेवाला है, इससे परमेश्वर का नाम रत्नधातम है। रत्न शब्दपूर्वक किप् प्रत्ययान्त डुधाञ्ज धातु से **तमप् प्रत्यय** करने से यह शब्द सिद्ध हुआ है। इस मन्त्र को निरुक्तकार यास्क मुनि ने जिस प्रकार की व्याख्या की है सो इस वेदमन्त्र के संस्कृत भाष्य में लिखी है, उसको वहीं देख लेना।

हमने इस लेख में महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य के नमूने के रूप में प्रकाशित अंक से एक मन्त्र का केवल हिन्दी में एक ही अर्थ प्रस्तुत कर वैदिक ज्ञान व वेदभाष्य का नमूना पाठको के लाभार्थ प्रस्तुत किया है। पाठक सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न इस ईश्वरीय ज्ञान वेद के प्रथम मन्त्र व उसके हिन्दी अर्थ को जानकर इसमें निहित विचारों व व्याख्या से लाभान्वित होंगे और जीवन कल्याण के स्रोत वेदों को अपने भावी जीवन में स्वाध्याय व अध्ययन का अंग बनायेंगे, इस भावना के साथ लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**